TIGHT BINDING BOOK

UNIVERSAL
LIBRARY
OU_182363
UNIVERSAL
LIBRARY

Approved by Andhra-University

Selections in Hindi Poetry.

हिन्दी-पद्य-संग्रह

Pre-University Examination

(Andhra-University)

Published by

Kala-Niketan

Patna : Hyderabad.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. Accession No.

Author

Title

This book should be returned on or before the date last marked below.

इस संकलन के संचयन में जिन कवियों की
कविता का उपयोग किया गया है, उनके
प्रति संपादक आभारी है।

Price Rs 1/8/-

Printed by Nagari Prakashan Private Ltd
at Yugantar Press, Patna 4
1959.

विषय-सूची

प्राचीन पद्य

		पृष्ठ
१. कबीर	.. ...	३
२. सूरदास	.. ...	५
३. तुलसीदास	.. ...	७
४. रहीम	. ...	९
५. वृन्द	... ...	११
६. बिहारीलाल	... ...	१३

नवीन पद्य

७. श्रीअयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

भारत का नवयुवक १७

८. श्रीमैथिलीशरण गुप्त

मा, मर अंचल-धन सो ... २०

निर्झर ... २२

९. पं० रामनरेश त्रिपाठी

भस्म की ज्वाला ... २४

१०. पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

जगत उबारो ... २६

११. ठा० गोपालशरण सिंह

ग्राम २९

पृष्ठ

१२. श्रीमाखनलाल चतुर्वेदी

पुष्प की अभिलाषा ३२

भारत के भावी विद्वान ३३

१३. श्रीजयशंकर प्रसाद

अशोक की चिन्ता ३४

१४. पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

तेरे चरणों पर ३६

भिक्षुक ३८

१५. श्रीसुमित्रानन्दन पन्त

मानव जीवन ४०

१६. श्रीमती महादेवी वर्मा

मुरझाया फूल ४२

१७. श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान

झाँसी-रानी की समाधि पर ४४

१८. श्रीरामधारी सिंह 'दिनकर'

रात यों कहने लगा चाँद ४५

१९. श्रीहरिवंश राय 'बच्चन'

माँग रहे हैं समाधान ४८

२०. श्रीसियारामशरण गुप्त

यात्रा ५१

२१. श्रीसोहनलाल द्विवेदी

बोधि-वृक्ष में ५३

प्राचीन पद्य

कबीर

साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
जाके हिरदे साँच है, ता हिरदे गुरु आप ॥१॥

जा घट प्रेम न संचरे, सो घट जान मसान।
जैसे खाल लुहार की साँस लेत बिन प्रान ॥२॥

रात गँवाई सोय कर, दिवस गँवाई खाय।
हीरा जनम अमोल था, कौड़ी बदले जाय ॥३॥

मूड़ मुड़ाए हरि मिले, सब कोई लेय मुड़ाय।
बार-बार के मूड़ते, भेड़ न बैकुंठ जाय ॥४॥

आछे दिन पाछे गए, गुरु से किया न हेत।
अब पछतावा क्या करै, चिड़िया चुग गई खेत ॥५॥

'कबिरा' यह तन जात है, सकै तो राख बटोर।
खाली हाथौं वे गए, जिनके लाख करोर ॥६॥

मेरा मुझ में कुछ नहीं, जो कुछ है सो तोर।
तेरा तुझ को सौंपते, क्या लागत है मोर ॥७॥

क्या मुख ल ाबनता करा, लाज आवत ह मोह ।
तुम देखत अवगुन करौ, कैसे भावों तोहि ।।८।।

तीर तुपक मे जो लड़ै, सो तो सूर न होय ।
माया तजि भक्ती करै, सूर कहावै सोय ।।९।।

जो कुछ किया सो तुम किया, मै कछु कीया नाहि ।
कहा-कही जो मै किया, तुम ही थे मुझ माहि ।।१०।।

साहेब-सा समरथ नही, गरुआ गहिर गंभीर ।
औगुन छोड़ै गन गहै, छिनक उतारै तीर ।।११।।

साधु कहावन कठिन है, लबा पेड़ खजूर ।
चढै तो चाखै प्रमरस, गिरै तो चकनाचूर ।।१२।।

आये है सो जायँगे, राजा रक फकीर ।
इक सिघासन चढि चले, इक बँधि जात जँजीर ।।१३।।

हम तो जोगी मनहि के, तन के है ते और ।
मन का जोग लगावते, दसा भई कुछ और ।।१४।।

माँगन मरन समान है, मति कोइ माँगो भीख ।
माँगन ते मरना भला, यह सतगुरु की सीख ।।१५।।

साँई इतना दीजिए, जामे कुटुंब समाय ।
मै भी भूखा ना रहूँ, साधु न भूखा जाय ।।१६।।

सूरदास

१

हम भक्तन के, भक्त हमारे ।
सुन अर्जुन परतिग्या मेरी, यह व्रत टरत न टारे ।।
भक्तै काज लाज हिय धरिकै, पाइ पयादे धाऊँ ।
जहँ-जहँ भीर परे भक्तन पै, तहँ-तहँ जाय छुड़ाऊँ ।।
जो मम भक्त सो बैर करत है, सो निज बैरी मेरो ।
देखि बिचारि भक्त-हित-कारन, हाँकत हौं रथ तेरो ।।
जीते जीति भक्त अपने को, हारे हारि बिचारौं ।
'सूरदास' सुनि भक्त-बिरोधी, चक्र-सुदर्शन जारौं ।।

२

सोभित कर नवनीत लिये ।
घुटुरुन चलत रेनु तनुमंडित मुख दधि लेप किये ।।
चारु कपोल लोल लोचन गोरोचन तिलक दिये ।
लट लटकनि मनु मत्त मधुपगन मादक मदहि पिये ।।
कठुला कंठ, बज्र केहरि नख राजत रुचिर हिये ।
धन्य सूर, एकौ पल यह सुख, का सतकल्प जिये ।।

चोरी करत कान्ह धरि पाये ।
निसि बासर मोहि बहुत सतायो, अब हरि हाथहिं आये ।।
माखन दधि मेरो सब खायो, बहुत अचगरी कीन्हीं ।
अब तो फंद परे हौ लालन, तुम्हें भले मैं चीन्ही ।।
दोउ भुज पकरि कह्यो, कित जैहौ, माखन लेउँ मँगाई ।
तेरी सौं मैं नेकु न चाख्यो, सखा गये सब खाई ।।
मुख तन चितै बिहँसि हँसि दीनो, रिस तब गई बुझाई ।
लियौ उर लाइ ग्वालिनी हरि को, 'सूरदास' बलि जाई ।।

४

प्रभु मेरे, अवगुन चित न धरौ ।
समदरसी है नाम तुम्हारो, सोई पार करौ ।
एक लोहा पूजा में राखत, इक घर बधिक परौ ।
सो दुबिधा पारस नहिं जानत, कंचन करत खरौ ।
इक नदिया इक नार कहावत, मैलो नीर भरौ ।
जब मिलि गए तब एक बरन ह्वै, गंगा नाम परौ ।
तन माया, ज्यों ब्रह्म कहावत, सूर सुमिलि बिगरौ ।
कै इनको निरधार कीजिये, कै प्रन जात टरौ ।।

५

बाल विनोद खरो जिय भावत ।
मुख प्रतिबिंब पकरिबे कारन, हुलसि घुटरुवनि धावत ।
अखिल ब्रह्माण्ड-खंड की महिमा, सिसुता माँहि दुरावत ।
शब्द जोरि बोल्यौ चाहत है, प्रगट बचन नहिं आवत ।
कमल-नैन माखन माँगत है, करि-करि सैन बतावत ।
सूरदास स्वामी सुख-सागर, जसुमति-प्रीति बढ़ावत ।

तुलसीदास

तुलसी संत सुअंब तरु, फूलि फलहि परहेत ।
इतते ये पाहन हनत, उतने वे फल देत ।।१।।

एक भरोसो एक बल, एक आस बिस्वास ।
एक राम घन स्याम हित, चातक तुलसीदास ।।२।।

गोधन गजधन बाजिधन, और रतन धन खान ।
जब आवत संतोष धन, सब धन धूरि समान ।।३।।

बारि मथे बरु होय घृत, सिकता ते बरु तेल ।
बिनु हरिभजन न भव तरिय, यह सिद्धांत अपेल ।।४।।

सपने होइ भिखारि नृप, रंक नाकपति होइ ।
जागें लाभ न हानि कछु, तिमि प्रपंच जिय जोइ ।।५।।

और करै अपराध कोउ, और पाव फलभोगु ।
अति विचित्र भगवंत गति, को जाने जग जोगु ।।६।।

जड़-चेतन गुन दोषमय, विश्व कीन्ह करतार ।
संत हंस गुन गहहिं पय, परिहरि बारि बिकार ।।७।।

उपल बरसि, गरजत तरजि, डारत कुलिस कठोर।
चितव कि चातक मेघ तजि कबहुँ दूसरी ओर ॥८॥

हरित भूमि तृन संकुल, समुझि परै नहि पंथ।
जिमि पाखंडविवाद तें, लुप्त होहि सदग्रंथ ॥९॥

ना जाँचै ना संग्रहै, दान नाइ नहि लेहि।
ऐसे मानी माँग नहि, बिन बारिद को देहि ॥१०॥

गाइए गनपति जगवंदन। संकरसुवन भवानीनंदन ॥
सिद्धिसदन गजबदन विनायक। कृपासिंधु सुन्दर सब लायक ॥
मोदक प्रिय मृदमंगलदाता। विद्यावारिधि बुद्धिविधाता ॥
माँगत तुलसिदास कर जोरे। बसहि राम सिय मानस मोरे ॥

(विनयपत्रिका से)

बर दंत की पंगति कुंद कली, अधराधर-पल्लव खोलन की ॥
चपला चमकै घन बीच जगै छबि मोतिन माल अमोलन की ॥
घुंघुरारी लटैं लटकैं मुख ऊपर, कुंडल लोल कपोलन की ॥
निवछावरि प्रान करै तुलसी, बलि जाउँ लला इन बोलन की ॥

दूलह श्री रघुनाथ बने, दूलही सिय सुन्दर मंदिर माहीं ॥
गावति गीत सबै मिलि सुन्दरि, बेद जुवा जुरि बिप्र पढ़ाहीं ॥
राम को रूप निहारति जानकी कंकन के नग की परछाहीं ॥
यातें सबै सुधि भूल गई, कर टेकि रही पल टारति नाहीं ॥

(कवितावली से)

रहीम

रहिमन बिपदा हू भली, जो थोरे दिन होय।
हित अनहित या जगत में, जानि परत सब कोय ॥१॥

जो रहीम मन हाथ है, मनसा कहुँ किन जाहि।
जल में ज्यों छाया परी, काया भीजत नाहि ॥२॥

धनि रहीम जल पंक को, लघु जिय पियत अघाय।
उदधि बड़ाई कौन है, जगत पियासो जाय ॥३॥

जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग।
चन्दन विष व्यापत नहीं, लपटे रहत भुजंग ॥४॥

जो बड़ेन को लघु कहो, नहिं रहीम घटि जाहिं।
गिरिधर मुरलीधर कहे, कछु दुख मानत नाहिं ॥५॥

मथत-मथत माखन रहे, दही मही बिलगाइ।
'रहिमन' सोई मीत है, भीर परे ठहराइ ॥६॥

जो 'रहीम' गति दीप कै, कुल कपूत कै सोइ।
बारे उजियारो करै, बढ़े अँधेरो होइ ॥७॥

तरुवर फल नहिं खात है, सरवर पियहिं न बान ।
कहि रहीम परकाज हित, संपति संचहि सुजान ।।८।।

धूर धरत नित सीस पर, कहु रहीम किहि काज ।
जिहि रज मुनि पतनी तरी, सो ढूँढ़त गजराज ।।९।।

जो गरीब सों हित करै, धनि रहीम वे लोग ।
कहा सुदामा बापुरो, कृष्ण मिताई जोग ।।१०।।

समय, दशा, कुल देखि के, लोग करत सनमान ।
रहिमन दीन अनाथ को, तुम बिन को भगवान ।।११।।

●

वृन्द

कारज धीरे होत है, काहे होत अधीर ।
समय पाय तरुवर फलै, केतक सींचो नीर ।।१।।

ओछे नर के पेट में, रहै न मोटी बात ।
आध सेर के पात्र में, कैसे सेर समात ।।२।।

सबै सहायक सबल के, कोउ न निबल सहाय ।
पवन जगावत आग को, दीपहि देत बुझाय।।३।।

बुरे लगत सिख के वचन, हिये विचारो आप ।
करुवी भेषज बिन पिये, मिटै न तन को ताप ।।४।।

उत्तम जन सो मिलत ही, अवगुन सो गुन होय ।
घन संग खारो उदधि मिलि, बरसै मीठे तोय ।।५।।

लोकन के अपवाद को, डर करिये दिन रैन ।
रघुपति सीता परिहरि, सुनत रजक के बैन ।।६।।

करत करत अभ्यास ते, जड़मति होत सुजान ।
रसरी आवत जात ते, सिल पर परत निसान ।।७।।

जूआ खेले होतु है, सुख संपति को नास।
राजकाल नल ते छुट्यो, पांडव किय बनवास ।।८।।
जिहि प्रसङ्ग दूषन लगे, तजिये ताको साथ।
मदिरा मानत है जगत, दूध कलाली हाथ ।।९।।
क्यों कीजै ऐसो जतन, जाते काज न होय।
परबत पर खोदे कुआँ, कैसे निकसै तोय ।।१०।।
जो पावै अति उच्चपद, ताको पतन निदान।
ज्यों तपि तपि मध्याह्न लों, अस्त होतु है भान ।।११।।

बिहारीलाल

सीस मुकुट कटि काछनी, कर मुरली उर माल।
यह बानिक मो मन बसौ, सदा बिहारीलाल ।।१।।

कहैं यहै सब स्रुति सुमृति, यहै सयाने लोग।
तीन दबावत निसकहीं, पातक राजा रोग ।।२।।

कहलाने एकत बसत, अहि मयूर मृग बाघ।
जगत तपोवन सौ कियौ, दीरघ दाघ निदाघ ।।३।।

समै-समै सुन्दर सबै, रूप-कुरूप न कोय।
मन की रुचि जेती जितै, तित तेती रुचि होय ।।४।।

दस दिन आदरु पायकै, करिलै आपु बखान।
जौ लौं काग सराध-पख, तौ लौं तौ सनमान ।।५।।

सतसैया के दोहरे, ज्यों नावक के तीर।
देखन को छोटन लगैं, घाव करैं गंभीर ।।६।।

पट पाँखे भखु काकरै, सदा परेईं संग।
सुखी परेवा जगत में, एकै तू ही बिहग ।।७।।

जगत जनायौ जेहि सकलु, सो हरि जान्यौ नाहिं ।
ज्यों आँखिनु सब देखियै, आँखि न देखी जाहिं ।।८।।

जात-जात बित होत है, ज्यों जिसमें संतोष ।
होत-होत ल्यों होय तौ, होय घरी में मोष ।।९।।

कोऊ कोटिक संग्रहौ, कोऊ लाख हजार ।
मो संपति जदुपति सदा, बिपति बिदारनहार ।।१९।।

आधुनिक पद्य

भारत के नवयुवक

जाति-धनप्रिय नवयुवक-समूह,
विमल मानस के मंजु मराल।

देश के परम मनोरम रत्न,
ललित भारत-ललना के लाल।

लोक की लाखों आँखें आज,
लगी हैं तुमलोगों की ओर।

भरी उनमें है करुणा भूरि,
लालसमय है ललकित कोर।

उठो, लो आँखें अपनी खोल,
विलोको अवनीतल का हाल।

अनालोकित में भर आलोक,
करो कमनीय कलंकित भाल।

भरे उर में जो अभिनव ओज,
सुना दो वह सुन्दर झनकार।

ध्वनित हो जिससे मानस-यन्त्र,
छेड़ दो उस तन्त्री के तार।

रगों में बिजली जावे दौड़,
जगे भारत-भूतल का भाग।

प्रभावित धुन से हो भरपूर,
उमग गाओ वह रोचक राग।

हो सके जिससे सुगठित जाति,
सुकंठों में गूंज वह तान।

भाव जिसमें हों भरे सजीव,
करो ऐसे गीतों का गान।

कर विपुल साहस वज्र-प्रहार,
विफलता-गिरि को कर दो चूर।

जगा दो सफल साधना-ज्योति,
विविध बाधा-तम कर दो दूर।

गगन में जग, भूतल मे घूम,
निकालो कार्य-सिद्धि की राह।

अचल को विचलित कर दो भूरि,
रोक दो वारिधि-वारि-प्रवाह।

धूल में क्यों मिलती है धाक,
बचा लो बची-बचाई आन।

मचा दो दोष-दलन की धूम,
मसल दो दुख को मशक-समान।

लाभ-हित देश-प्रेम-रवि-ज्योति,
आँख लो निज भावों को खोल।

त्याग करके निजता - अभिमान,
जाति-ममता का समझो मोल।

देश के हित निज जाति-निमित्त,
अतुल हो तुम लोगों का त्याग।

अवनि-जन-अनुरंजन के हेतु,
बनो तुम मूर्तिमान अनुराग।

अनाथों के कहलाओ नाथ,
हरो अबला जन-दुख अविलम्ब।

वृद्धजन के लोचन की ज्योति,
अकिंचन जन की विपुल विभूति।

भरो भूतल में कीर्त्ति-कलाप,
दिखा भारत-जननी से प्यार।

करो पूजन इनका पद-कंज,
बना सुरभित सुमनों का हार।

—अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

सो, मेरे अंचल-धन, सो !

सो, अपने चंचलपन, सो !

पुष्कर सोता है निज सर में,
भ्रमर सो रहा है पुष्कर में,
गुंजन सोया कभी भ्रमर में,

सो, मेरे गृह-गुंजन, सो !
सो, मेरे अंचल-धन, सो !

तनिक पार्श्व-परिवर्त्तन कर ले,
उस नासा-पुट को भी भर ले,
उभय पक्ष का मन तू हर ले,

मेरे व्यथा-विनोदन, सो !
सो, मेरे अंचल-धन, सो !

रहे मन्द ही दीपक-माला,
तुझे कौन भय-कष्ट-कसाला ?
जाग रही है मेरी ज्वाला,

सो मेरे आश्वासन, सो !
सो मेरे अंचल-धन, सो !

ऊपर तारे झलक रहे हैं,
गोखों से लग ललक रहे हैं,
नीचे मोती ढलक रहे हैं,

मेरे अपलक-दर्शन, सो !
सो, मेरे अंचल-धन, सो !

तेरी साँसों का सुस्पन्दन,
मेरे तप्त हृदय का चन्दन !
सो, मैं कर लूँ जी-भर क्रन्दन !

सो, उनके कुल-नन्दन, सो !
सो, मेरे अंचल-धन, सो !

खेले मन्द पवन अलकों से,
पोंछूं मैं उनको पलकों से,
छद-रद की छवि की छलकों से,

पुलक-पूर्ण शिशु-यौवन, सो !
सो, मेरे अंचल-धन, सो !

—मैथलीशरण गुप्त की 'यशोधरा' से

निर्झर

शत-शत बाधा-बन्धन तोड़,
निकल चला मैं पत्थर फोड़।

प्लावित कर पृथ्वी के पर्त्त,
सम-तल कर बहु गह्वर-गर्त्त,
दिखला कर आवर्त्त-विवर्त्त,

आता हूँ आलोड़-विलोड़,
निकल चला मैं पत्थर फोड़!

पारावार-मिलन की चाह,
मुझे मार्ग की क्या परवाह?
मेरा पथ है स्वतः प्रवाह,

जाता हूँ चिरजीवन जोड़,
निकल चला मैं पत्थर फोड़!

गढ़कर अनगढ़ उपल अनेक,
उन्हें बनाकर शिव सविवेक,
करके फिर उनका अभिषेक,

बढ़ता हूँ निज नवगति मोड़,
निकल चला मैं पत्थर फोड़ !

हरियाली है मेरे संग,
मेरे कण-कण में सौ रंग,
फिर भी देख जगत के ढंग,

गूँजता हूँ मैं भृकुटि मरोड़,
निकल चला मैं पत्थर फोड़ !

धरकर नव कलरव निष्पाप,
हरकर सन्तापों का ताप,
अपना मार्ग बनाकर आप,

जाऊँ सब कुछ पीछे छोड़,
निकल चला मैं पत्थर फोड़ !

है सब का स्वागत-सम्मान,
करे यहाँ कोई रस-पान,
मेरा जीवन गतिमय गान,

काल ! तुझी से मेरी होड़,
निकल चला मैं पत्थर फोड़ !

मैथिलीशरण गुप्त

भूख की ज्वाला

(१)

धधक रही सब ओर भूख की ज्वाला घर-घर में।
मांस नहीं है, निरी साँस है शेष अस्थि-पंजर में।
अन्न नहीं है, वस्त्र नहीं है, रहने का न ठिकाना।
कोई नहीं किसी का साथी अपना और विराना।

(२)

लाखों नहीं, करोड़ों ऐसे हैं मनुष्य दुख पाते।
जीवन-भर जो जठरानल में जल-जलकर मर जाते।
हाय! हाय! कर लोग साँझ को निराहार सो जाते।
एक बार भी रात-दिवस में पेट नहीं भर पाते।

(३)

खाते हैं गम, और आँसुओं ही से प्यास बुझाते।
लेकर आयु विविध रोगों की है दिन-रात बिताते।
फटे-पुराने चिथड़ों ही से ढके किसी विधि तन है।
कैसे सियें, सुई-तागे से भी नितान्त निर्धन है।

(४)

बड़े सबेरे से संध्या तक करके कठिन मजूरी।
सुख के बदले में पाते हैं आयु मजूर अधूरी।
चिंतित हैं, आश्चर्य-चकित हैं, कृषक विकल हैं दुख से।
कौन काट लेता है उनका कौर अचानक मुख से।

(५)

त्राहि! त्राहि! सब ओर मची है, व्याकुल हैं नर-नारी।
वे न सँभाल भार सकते हैं, लघु जीवन का भारी।
घोर दीनता ही के कारण सद्गुण रहा न उनमें।
बढ़ती ही जाती प्रवृत्ति है नित सबकी दुर्गुण में।

(६)

झूठ, दम्भ, विश्वासघात, छल से पर-धन हरते हैं।
काई भी अनीति करने में लोग नहीं डरते हैं।
सद्गुण जो मनुष्य-जीवन की उन्नति का साधक है।
इसकी ही उन्नति का अब तो पेट हुआ बाधक है।

(७)

सत्य, धैर्य्य, विश्वास, सुजनता, पौरुष, सद्गुण सारे।
पैसे-पैसे पर बिकते हैं कुटिल नीति के मारे।
नये-नये अभियोग अमूलक नित चलते रहते हैं।
निरपराध अन्याय दण्ड नित ही सज्जन सहते हैं।

—पंडित रामनरेश त्रिपाठी

जगत उघारो

धधक रहा है सब भूमण्डल
भूधर खौल रहे निशि-वासर,
सखे, आज शोलों की बारिश
नभ से होती है सर-सर-सर।

घन-गर्जन से भी प्रचण्डतर
शतघ्नियों का गर्जन भीषण,
घर्षण करता है मानव-हिय
जग में मचा घोर संघर्षण।

नर ही स्वयं बना है नर के
रक्त-मांस का प्यारा भक्षक;
आज पुष्प-से मानव-हिय में
आ बैठा है कोई तक्षक।

जहां दौड़ते थे पहले नर
जीवन-दान मृतों को देने,
वहीं आज बढ़ते हैं वे ही
जीवित के प्राणों को लेने।

मानव ने अपनापन खोया
उसने अपनाई दानवता,
भीषण संघर्षण में पड़कर
चकनाचूर हुई मानवता।

यह कैसी विक्षिप्तता अरे?
यह कैसा उन्माद भयंकर?
जला रहे हम अपना ही घर!
काट रहे हम अपना ही सर!

हिंसा और अहिंसा दोनों
प्रकृतिसिद्ध गुण हैं मानव के,
विष-मधु, दोनों ही निकले हैं
मन्थन-सार हृदय-अर्णव के।

एक राक्षसी क्रीड़ा है तो
दूजा है देवत्व-दिवाकर,
एक निम्नगतिप्रेरक है तो
बना अन्य सोपान ऊर्ध्वचर।

हमें खींचना है मानव को
जोर लगा नीचे से ऊपर;
क्योंकि ऊर्ध्वगति में ही पाता
यह नर निज स्वरूप चिरसुन्दर।

अरे, हमें तो शान्ति-सौख्य का
देना है वरदान नरों को,

ध्वस्त नहीं, निर्मित करना है
हमको गाँवों को, नगरों को।

आज खून का नहीं, अमिय का
वर्षण करने यहाँ पधारो,
आओ इस झंडे के नीचे
अहो, वीर, यह जगत उबारो।

—श्रीबालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

ग्राम

प्रकृति-सुन्दरी की गोदी में,
खेल रहा तू शिशु-सा कौन।
कोलाहलमय जग को हरदम,
चकित देखता है तू मौन।

जग के भोलेपन का प्रतिनिधि,
सहज सरलता का आख्यान।
विमल स्रोत मानव-जीवन का,
तू है विधि का करुण-विधान।

छिपा मही के मृदु अंचल में,
जग का मूर्त्तिमान अनुराग।
तुझसे ही सीखता जगत है,
औरों के हित करना त्याग।

भोली ललनाओं से लालित,
विश्व-पुष्प का पुष्प-पराग।
कृषकों के श्रम-जल से सिंचित,
जग का छोटा-सा है बाग।

होकर भी असभ्य तू ही है,
विश्व-सभ्यता का आधार।
स्वावलम्ब की समुचित शिक्षा,
पाता तुझसे है संसार।

सरल बालकों का क्रीड़ास्थल,
जगती के कृषकों का प्राण।
करता है इस विपुल विश्व का,
तू ही सदा क्षुधा से त्राण।

मानवता का प्रेम-निकेतन,
आदि-सभ्यता का इतिहास।
भ्रातृ-भाव-समता-क्षमता का,
तू है अवनी में अधिवास।

भोली चितवन से तू जग को,
सदा देखता है अविकार।
सब के लिए खुला रहता है,
सन्तत तेरे उर का द्वार।

दया, क्षमा, ममता आदिक है,
तेरे रत्नों के भण्डार।
है निर्मल जल शुद्ध वायु ही,
तेरे जीवन के उपहार।

छल से रहता दूर किन्तु तू,
बल-पौरुष में है भरपूर।

तेरे जीवन-धन है जग में,
बस किसान एवं मजदूर ।

जग को जगमग करनेवाला,
है तुझमें न प्रकाश महान ।
पर मिट्टी के ही दीपक से,
रहता है तू ज्योतिष्मान ।

काँटे चुभते ही रहते हैं,
उड़ती रहती तुझ पर धूल ।
तो भी तू न मलिन होता है,
विश्व-वाटिका का मृदु फूल ।

रखकर सबसे निपट निराला,
जगती-तल में निज व्यक्तित्व ।
करता है तू सफल सर्वदा,
अपना छोटा-सा अस्तित्व ।

—ठाकुर गोपाल शरण सिंह

[१]

पुष्प की अभिलाषा

चाह नहीं, मैं सुर-बाला के गहनों में गूँथा जाऊँ,
चाह नहीं, प्रेमी-माला में बिध प्यारी को ललचाऊँ;
चाह नहीं, सम्राटों के शव पर हे हरि ! डाला जाऊँ,
चाह नहीं, देवों के सिर पर चढ़ूँ, भाग्य पर इठलाऊँ;

मुझे तोड़ लेना वनमाली,
उस पथ पर देना तुम फेंक,
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने ।
जिस पथ जावें वीर अनेक ।।

[२]

भारत के भावी विद्वान

जिनको बाल समझकर माता,
दूध पिलाती सुधा-समान ।
जिनको पाल हुई है जगती-
तल में वह आनन्द-निधान ।
जिनको लाल-लाल कह उसने,

भुला दिया सुख-दुख का ध्यान ।
जानो उन्हें राष्ट्र की सम्पत,
भारत के भावी विद्वान ।
आओ, इनकी शिक्षा के हित,
उथल-पुथल कर दें संसार ।
इन्हें बनावें कला-कुशल नय-
निपुण, वीर, धीमान, उदार ।
डरें न, प्रण पर मरें, करें
कर्त्तव्य, बनावें दृढ़ संतान ।
भारतीय हैं वही, बनावें,
भारत के भावी विद्वान ।
जिनको होगा जन्म-भूमि के,
कण-कण का पूरा अनुमान ।
भाषा, भाव, भेष, भोजन में,
भारतीयता का अभिमान ।
कौन हमारा दुःख हरेंगे,
हमें करेंगे गौरववान ।
यह सुन सच्चे हृदय कहेंगे—
भारत के भावी विद्वान ।

—श्री माखनलाल चतुर्वेदी 'भारतीय आत्मा'

अशोक की चिन्ता

जलता है यह जीवन पतंग ।
जीवन कितना अति लघु क्षण,
ये शलभपुञ्ज-से कण-कण,
तृष्णा वह अनलशिखा बन—
दिखलाती रक्तिम यौवन,
जलने की क्यों न उठे उमंग ?
है ऊँचा आज मगध सिर—
पदतल विजित पड़ा गिर,
दूरागत क्रन्दन-ध्वनि फिर
क्यों गूंज रही है अस्थिर
कर विजयों का अभिमान भग ?
इन प्यासी तलवारों से,
इनकी पैनी धारों से,
निर्दयता की मारों से
उन हिंस्रक हुंकारों से,
नतमस्तक आज हुआ कलिंग ।

यह सुख कैसा शासन का ?
शासन रे मानव-मन का !
गिरि-भार बना रे तिनका,
यह घटाटोप दो दिन का—

फिर रवि-शशि-किरणों का प्रसंग ।

यह महादम्भ का दानव
पीकर अनंग का आसव,
कर चुका महा भीषण रव,
सुख दे प्राणों को मानव,

तज विजय-पराजय का कुढंग ।

संकेत कौन दिखलाती,
मुकुटों को सहज गिराती,
जयमाला सूखी जाती,
नश्वरता गीत सुनाती,

तब नहीं थिरकते हैं तुरंग ।

जब पल भर का है मिलना,
फिर चिर वियोग में झिलना,
एक ही प्रात है खिलना,
फिर सूख धूल में मिलना,

तब क्यों चटकीला सुमन-रंग ?

संसृति के विक्षत पग रे,
यह चलती है डगमग रे,
अनुलेप-सदृश तू लग रे,
मृदु दल बिखेर इस मग रे,

कर चुके मधुर मधुपान भृङ्ग।

--जयशंकर प्रसाद

[१]

तेरे चरणों पर

नर-जीवन के स्वार्थ सकल
बलि हों तेरे चरणों पर, माँ,
मेरे श्रम-संचित सब फल।
जीवन के रथ पर चढ़कर,
सदा मृत्यु-पथ पर बढ़कर,
महाकाल के खरतर शर सह—
सकूँ, मुझे तू कर दृढ़तर,
जागे मेरे उर में तेरी,
मूर्त्ति अश्रुजल-धौत विमल,
दृग-जल से पा बल, बलि कर दूँ,
जननि, जन्म-श्रम-संचित फल!
बाधाएँ आयीं तन पर
देख तुझे, नयन-मन भर,

मुझे देख तू सजल दृगों से,
अपलक, उर के शतदल पर,
क्लेदयुक्त अपना तन दूंगा,
मुक्त करूँगा तुझे अटल,
तेरे चरणों पर देकर बलि,
सकल श्रेय-श्रम-संचित फल !

[२]

भिक्षुक

वह आता—
दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता।
पेट-पीठ दोनों मिलकर हैं एक,
चल रहा लकुटिया टेक,
मुट्ठी-भर दाने को—भूख मिटाने को
मुँह फटी-पुरानी झोली का फैलाता—
दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता।
साथ दो बच्चे भी हैं सदा हाथ फैलाये,
बायें से वे मलते हुए पेट को चलते,
और दाहिना दयादृष्टि पाने की ओर बढ़ाये।
भूख से सूख ओठ जब जाते,
दाता—भाग्यविधाता से क्या पाते ?

घूंट आंसुओं के पीकर रह जाते।
चाट रहे जूठी पत्तल वे कभी सड़क पर खड़े हुए।
और झपट लेने को उनसे कुत्ते भी हैं अड़े हुए।
ठहरो अहा! मेरे हृदय में है अमृत, मैं सींच दूंगा,
अभिमन्यु-जैसे हो सकोगे तुम?
तुम्हारे दुःख मैं अपने हृदय में खींच लूंगा।

पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

●

मानव-जीवन

मैं नहीं चाहता चिरसुख,
चाहता नहीं अविरत दुख।
सुख-दुख की आँखमिचौनी,
खोले जीवन अपना मुख।

सुख-दुख के मधुर मिलन से,
यह जीवन हो परिपूरन।
फिर घन में ओझल हो शशि,
फिर शशि से ओझल हो घन।

जग पीड़ित है अति दुख से,
जग पीड़ित रे अति सुख से।
मानव-जग में बँट जावे,
दुख-सुख से औ सुख-दुख से।

अविरत दुख है उत्पीड़न,
अविरत सुख भी उत्पीड़न।

दुख - सुख को निशा - दिवा में,
सोता - जगता जग - जीवन ।।

यह साँझ-उषा का आँगन,
आलिंगन विरह - मिलन का ।
चिर हास - अश्रुमय आनन,
रे इस मानव - जीवन का ।।

— श्रीसुमित्रानंदन पंत

●

मुरझाया फूल

था कली के रूप, शैशव में अहो सूखे सुमन !
हास्य करता था खिलाती अंक मे तुझको पवन ।।
खिल गया जब पूर्ण तू मंजल सुकोमल पुष्पवर !
लुब्ध मधु के हेतु मँडराने लगे आने भ्रमर ।।

स्निग्ध किरणे चन्द्र की तुझको हँसाती थीं सदा ।
रात तुम पर वारती थी मोतियो की सम्पदा ।।
लोरियाँ गाकर मधुप निद्रा-विवश करते तुझे ।
यत्न माली के रहे आनन्द से भरते तुझे ।।

कर रहा अठखेलियाँ इतरा सदा उद्यान मे ।
अन्त का यह दृश्य आया था कभी क्या ध्यान मे ।।
सो रहा तू अब धरा पर शुष्क बिखराया हुआ ।
गन्ध-कोमलता नही, मुख मंजु मुरझाया हुआ ।।

आज तुझको देखकर चाहक भ्रमर आता नहीं ।
लाल अपना राग तुझ पर प्रात बरसाता नही ।।

जिस पवन ने अंक में ले प्यार था तुझको किया ।
तीव्र झोंके से सुला उसने तुझे भू पर दिया ।।

कर दिया मधु और सौरभ दान सारा एक दिन ।
किन्तु रोता कौन है तेरे लिए दानी सुमन !
मत व्यथित हो फूल ! किसको सुख दिया संसार ने ।
स्वार्थमय सबको बनाया है यहाँ करतार ने ।।

विश्व में हे फूल ! तू सबके हृदय भाता रहा ।
दान कर सर्वस्व भी तू हाय हरषाता रहा ।।
जब न तेरी ही दशा पर दुख हुआ संसार को ।
कौन रोयेगा सुमन ! हम-से मनुज निस्सार को ।।

—श्रीमती महादेवी वर्मा

झाँसी-रानी की समाधि पर

इस समाधि में छिपी हुई है
एक राख की ढेरी।
जलकर जिसने स्वतन्त्रता की
दिव्य आरती फेरी।
यह समाधि, यह लघु समाधि, है
झाँसी की रानी की।
अन्तिम लीलास्थली यही है
लक्ष्मी मर्दानी की।
यहीं कहीं पर बिखर गई वह
भग्न हृदय-माला-सी।
उसके फूल यहाँ संचित हैं,
है यह स्मृतिशाला-सी।
सहे वार पर वार अन्त तक
लड़ी वीरबाला-सी।
आहुति-सी गिर, चढ़ी चिता पर,
चमक उठी ज्वाला-सी।

बढ़ जाता है मान वीर का
रण में बलि होने से।
मूल्यवती होती सोने की
भस्म यथा सोने से।
रानी से भी अधिक हमें अब
यह समाधि है प्यारी।
यहाँ निहित है स्वतन्त्रता की
आशा की चिनगारी।
इससे भी सुन्दर समाधियाँ
हम जग में हैं पाते।
उनकी गाथा पर निशीथ में
क्षुद्र जन्तु ही गाते।
पर कवियों की अमर गिरा में
इसकी अमिट कहानी।
स्नेह और श्रद्धा से गाती
है बच्चों की बानी।
यह समाधि, यह चिर समाधि है
झाँसी की रानी की।
अन्तिम लीलास्थली यही है
लक्ष्मी मर्दानी की।

—श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान

रात यों कहने लगा चाँद

रात यों कहने लगा मुझ से गगन का चांद,
आदमी भी क्या अनोखा जीव होता है !
उलझने अपनी बनाकर आप ही फँसता,
और फिर बेचैन हो जगता, न सोता है ।

जानता है तू कि मै कितना पुराना हूँ ?
मैं चुका हूँ देख मनु को जनमते-मरते;
और लाखों बार तुझसे-पागलों को भी,
चाँदनी मे बैठ स्वप्नों पर सही करते ।

आदमी का स्वप्न ? है वह बुलबुला जल का—
आज उठता और कल फिर फूट जाता है;
किन्तु, फिर भी धन्य, ठहरा आदमी ही तो ?
बुलबुलो से खेलता, कविता बनाता है ।

मैं न बोला, किन्तु मेरी रागिनी बोली—
देख फिर से, चांद ! मुझ को जानता है तू ?

स्वप्न मेरे बुलबुले हैं ? है यही पानी ?
आग को भी क्या नहीं पहचानता है तू ?

मैं न वह जो स्वप्न पर केवल सही करते,
आग में उसको गला लोहा बनाती हूँ,
और उस पर नींव रखती हूँ नये घर की,
नई तरह दीवार फौलादी उठाती हूं।

तू नहीं, मनु-पुत्र है यह सामने, जिसकी
कल्पना की जीभ में भी धार होती है,
वाण ही होते विचारों के नहीं केवल,
कल्प के भी हाथ में तलवार होती है।

स्वर्ग के सम्राट को जाकर खबर कर दे,
रोज ही आकाश चढ़ते जा रहे हैं वे,
एक, जैसे बने इन स्वप्नवालों को,
स्वर्ग की ही ओर बढ़ते आ रहे हैं वे।"

—रामधारी सिंह 'दिनकर'

माँग रहे हैं समाधान

(१)

कब, कहाँ पाप इतने छल-बल से व्याप्त हुआ
निर्दयता से करुणा का स्रोत समाप्त हुआ
किस लोक और किस युग में किसको प्राप्त हुआ
इतनी भीषण पशुता
दानवता का प्रमाण ?

मानवता कैसे फाँक रही है राख-धूर
संस्कृति-जैसे कूड़ा-कर्कट का एक घूर
सभ्यता हो गई है लज्जा से चूर-चूर
है छिन्न-भिन्न विक्षुब्ध
काल, जीवन, जहान !

भू माँग रही है इस घटना का समाधान
कण माँग रहा है इस घटना का समाधान
नभ माँग रहा है इस घटना का समाधान

जन माँग रहे हैं इस घटना का समाधान !
मन माँग रहा है
इस घटना का समाधान !

(२)

सुकरात सन्त ने पिया जहर का प्याला था
मीरा ने उनको चरणामृत कह डाला था
ऋषि दयानन्द को पड़ा उसीसे पाला था
हस्तियाँ उसी पैमाने की
विष पीती हैं !

हजरत ईसा को चढ़ा दिया था सूली पर
तन था नश्वर, लेकिन आत्मा थी अविनश्वर
वह आज किये घट कितनों के मन के अन्दर
वह वर्तमान, सदियों पर
सदियाँ बीती है ।

हम बापू को रख सकते थे कब तक अगोर
है जन्म-निधन जीवन-डोरी के ओर-छोर !
कितना महान आदर्श हमें वे गये छोड़ !
कौम ऊँची आदर्शों से
हो जाती है !

(३)

जो गोली खाकर गिरी मरी, वह थी छाया
है अजर-अमर उसके आदर्शों की काया,

भारत ने जिनको युग-युग तपकर उपजाया ।
थे हाड़-मांस के व्यक्ति नहीं
बाबा गांधी ।

जो पकड़ गया, वह तो है केवल छाया
कितने दिल में षड्यन्त्री ने आश्रय पाया
जितने कुत्सित भावों ने उसको दी काया
वह एक नही है
इस पातक का अपराधी ।

मन के अन्दर बिठलाकर नफरत के मूजी
की प्रतिमा, अपने से पूछो, कितनी पूजी ?
जिस भव्य भावना के प्रतीक थे बापूजी
तुमने कितनी वह अपने
जीवन मे साधी !

—हरिवंश राय 'बच्चन'

यात्री

(१)

कैसे पैर बढ़ाऊँ मैं
इस घन-गहन-विजन के भीतर
मार्ग कहाँ, जो जाऊँ मैं ?
कुटिल - कँटीले झखाड़ों में
उत्तरीय उड़कर मेरा
उलझ-उलझ जाता है, इसको
कहाँ-कहाँ सुलझाऊँ मैं ?
कहीं धँसी है धरा गर्त्त में,
कहीं चढ़ी है टीलों पर;
मुक्त विहग-सा उड़ जाऊँ जो
पंख कहाँ से लाऊँ मैं ?

(२)

पंख कहाँ से लाऊँ मैं ?
अरे, पैर ही क्या कुछ कम हैं
क्यों न अभी बढ़ जाऊँ मैं !

उत्तरीय का क्या, यह तनु भी
क्षतच्छिन्न हो जाने दूँ;
इन शतशत काँटों में बिंधकर
लक्ष-लाभ निज पाऊँ मैं !

गह्वर टीले इधर-उधर हैं,
मुझको पथ देने को ही,
अपने इन पदचिह्नों पर ही
नूतन मार्ग बनाऊँ मैं !
कुछ हो, पैर बढ़ाऊँ मैं ।

—श्रीसियारामशरण गुप्त

●

बोधि-वृक्ष से

तुम कौन छिपाये व्यथित हृदय, हो खड़े यहाँ काननवासी ?
किसलिए उदासी छाई है, किसलिए बन गये संन्यासी ?

क्या सोच रहे तुम जीवन के, उस सहचर की वह करुण कथा ?
या दग्ध कर रही है तुमको, उस दया-धाम की विरह व्यथा ?

क्यों मौन खड़े हो, हे तरुवर, कुछ तो मर्म-स्वर में बोलो।
उलझी है कौन गाँठ मन की, अपने उर का रहस्य खोलो।

हे भाग्यवान, सौभाग्य अहो ! तुम-सा किसने जग में पाया।
जिसके अंचल में रहने को, करुणावतार आतुर आया।

शुद्धोदन का वह रत्न-जटित, सिंहासन विगलित हो क्षण में।
तव चरण-धूलि धर मस्तक पर हो गया धन्य इस जीवन में।

वह दिन कितना मधुमय होगा, जब पल्लव-छाया के नीचे।
वह शान्त करुण की मधुर मूर्त्ति बैठी होगी आँखें मीचे।

करुणा की धारा उमड़ उठी, जिस दिन गौतम-हृदय-स्थल में।
थी दिव्य ज्योति की अमिताभा, उतरी उस दिन जगतीतल में।

वह था संसृत का स्वर्ण-काल, जब अभयदान जग ने पाया।
करुणा की अरुण हिलोरों से, जब हृदय-हृदय था भर आया।

इस बाह्यरूप का भेद भूल आत्मा ने आत्मा को जाना।
दो बिछुड़े हृदय मिले फिर से, प्राणों ने था सुख पहचाना।

युग-युग हैं तब से बीत चुके, हे मौन, आज कुछ गाओ तुम।
सन्देश दया का भूले हम, अब फिर से उसे सुनाओ तुम।

हे बोधि-वृक्ष! तव आँगन में जगती के नर-नारी आयें।
संतप्त हृदय तव छाया में प्राणों की शीतलता पायें।

— सोहनलाल द्विवेदी

बोधिवृक्ष गया में स्थित पीपल का वह पेड़, जिसके नीचे बुद्ध भगवान् ने ज्ञान प्राप्त किया था। — सं०

कवि-परिचय

कबीरदास

कबीरदास हिन्दी-साहित्य में एक उच्चकोटि के कवि, उपदेशक तथा भक्त के रूप में अवतरित हुए हैं। इनके जन्म के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। जनश्रुति के आधार पर इनका जन्म सं० १४५६ वि० में, काशी में हुआ था। इनका पालन-पोषण एक मुसलमान जुलाहे के घर में हुआ था। परन्तु, बचपन से ही इनका झुकाव हिन्दू-धर्म की ओर था। साधु-संन्यासियों के संग घूमते-फिरते रहने के कारण इन्होंने जो ज्ञान प्राप्त किया, उसे अपने मनन-चिन्तन द्वारा एक परिष्कृत रूप दिया। इन्होंने अपना एक सम्प्रदाय चलाया, जो 'कबीर-पन्थ' के नाम से विख्यात है।

कबीरदास निर्गुण ब्रह्म के उपासक थे। इनके गुरु का नाम रामानन्द था।

कबीर की कविताओं में हिन्दू और मुसलमान दोनों धर्मों की अच्छी बातें देखने को मिलती हैं। दोनों धर्मों के नाम पर समाज में जो कुछ भी बुराइयाँ चल रही थीं, कबीर ने निर्भीकता से उनका खण्डन किया। मूर्त्ति-पूजा, बाह्याडम्बर, हिंसा इत्यादि की इन्होंने खूब खबर ली।

कबीर की वाणी का उनके शिष्यों ने संग्रह किया है। इनकी रचनाएँ, साखी, सबदी और रमैनी नाम से संगृहीत हैं। इनके दोहे सरल और सुबोध होते हैं। भाषा 'सधुक्कड़ी' है।

सं० १५७५ वि० में ये परलोकवासी हुए।

●

सूरदास

यद्यपि सूरदास के जन्म-स्थान, वंश तथा जीवन-घटनाओं के विषय में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता, फिर भी अनुमानतः वे सारस्वत ब्राह्मण थे तथा उनका जन्म सं० १४५० वि० के लगभग मथुरा-आगरा की सड़क पर स्थित रुनकता गाँव में हुआ था।

भक्तशिरोमणि सूरदास का नाम हिन्दी साहित्य-जगत् में अत्यन्त आदर के साथ लिया जाता है। ये वल्लभाचार्य के शिष्य थे। इनके आराध्य देव कृष्ण भगवान् थे। 'सूरसागर' इनके गीतों का भाण्डार है। इन्होंने बालकृष्ण का जो सजीव चित्र खींचा है, वह सदा पाठकों को अपनी ओर आकृष्ट किये रहता है। इन्होंने यशोदा और कृष्ण के बीच का वात्सल्य बड़ी सरसता के साथ उपस्थित किया है। राधा और गोपियों का विरह-वर्णन पढ़ते ही बनता है। 'भ्रमरगीत' की रचना में तो मानो सूरदास ने रस-कलश ही उँडेल दिया है। इन्हीं विशेषताओं के कारण इनके विषय में यह उक्ति चल पड़ी है—

सूर सूर, तुलसी ससी, उडगन केशवदास।
अब के कवि खद्योत सम, जहँ-तहँ करत प्रकास॥

और—

उत्तम पद कवि गंग को, कविता को बलवीर।
केशव अर्थ गंभीर को, सुर तीन गुण धीर॥

सूरदास की भाषा ब्रजभाषा है, जो शुद्ध, परिष्कृत और मधुर है। सं० १६२० वि० के लगभग, पारसोली गाँव में इनकी मृत्यु हुई।

तुलसीदास

गोस्वामी तुलसीदास की गणना विश्व के सर्वश्रेष्ठ कवियों में होती है। कवि होने के अतिरिक्त ये एक महान् भक्त, दार्शनिक, तत्त्ववेत्ता तथा समाज-सुधारक थे। इनका जन्म सं० १५८९ वि० में बाँदा जिले के राजापुर नामक गाँव में हुआ था। इनके पिता का नाम आत्माराम तथा माता का नाम हुलसी था।

भक्तशिरोमणि तुलसीदासजी का 'रामचरितमानस' एक सर्वोत्कृष्ट अमर महाकाव्य है। समाज और राष्ट्र के उन्नयन में इनकी रामायण से अत्यधिक प्रेरणा प्राप्त होती है।

तुलसीदास को संस्कृत, ब्रज और अवधी भाषाओं पर असाधारण अधिकार प्राप्त था। ये राम के अनन्य भक्त थे। 'रामचरित-

मानस' में तुलसी ने राम के शील, शक्ति एवं सौन्दर्य का जो चित्र खींचा है, वह अद्भुत है। भारत में तुलसीकृत रामायण का घर-घर में प्रचार हुआ है और साधारण जनता का वह अवलम्बन ही नहीं बल्कि उनका वेद भी बना हुआ है।

तुलसीदास के ग्रन्थों में 'रामचरितमानस', 'विनय-पत्रिका' और 'कवितावली' विशेष प्रसिद्ध हैं। तुलसी ने कुल मिलाकर १४ ग्रन्थ लिखे हैं। इन्हीं रचनाओं के आधार पर ही तो भक्ति-काल को स्वर्ण-युग कहा गया है। तुलसी ने डूबते हुए हिन्दू-समाज को अपनी रामायण द्वारा सम्बल दिया और उन्हें विश्वास एवं साहस के साथ खड़े रहने का आत्म-विश्वास और दृढ़ता भी प्रदान की। हिन्दी-साहित्य में तुलसी-जैसे बहुभाषा-पण्डित और वेदविद् विरले ही मिलते हैं। लोक-संग्रह की भावना को उन्होंने रामायण द्वारा प्रकाश दिया और मर्यादापुरुषोत्तम राम का उज्ज्वल चरित्र आदर्श के रूप में समाज के सामने रखा। इन्हीं विशेषताओं के कारण तुलसीदास सदा के लिए अमर हो गये हैं। उनकी रामायण का प्रायः विश्व की सभी प्रमुख भाषाओं में रूपान्तरित होना उनकी जनप्रियता का द्योतक है।

सं० १६८० वि० में, काशी में इनका स्वर्गवास हो गया।

रहीम

हिन्दी-साहित्य में रहीम अपने नीतिपूर्ण दोहों के लिए सर्वाधिक लोकप्रिय है। वे अकबर के सेनापति बैरम खाँ के पुत्र थे तथा अकबर के नवरत्नों में से एक थे। इनका जन्म सं० १६१० वि० में हुआ था। रहीम धर्म से तो मुसलमान थे, पर उनके हृदय पर हिन्दू-संस्कृति का गहरा प्रभाव पड़ा था। गंग कवि के एक छन्द पर प्रसन्न हो आपने छह लाख रुपयों का दान कर दिया था। आप अपनी उदारता के कारण दानकर्ण कहलाये। आपने बरवै छन्द का जन्म भी दिया। शृङ्गारसोरठा, मदनाष्टक, बरवै रामायण इत्यादि आपकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। आपके दोहे, नीति एवं उपदेशपूर्ण हैं और उनमें जीवन का गहरा अनुभव भरा हुआ है।

यद्यपि रहीम अरबी, फारसी, संस्कृत एवं हिन्दी के विद्वान् थे, तथापि अपनी कविताओं में इन्होंने ब्रजभाषा एवं अवधी का प्रयोग किया है।

सं० १६८३ वि० में इनकी मृत्यु हो गई।

●

वृन्द

वृन्द जोधपुर के निवासी और कृष्णगढ़ के नरेश महाराज राजसिंह के राजगुरु थे। इनके जन्म-काल का ठीक-ठीक पता नहीं चलता है। 'वृन्द सतसई' नामक सात सौ नीतिपूर्ण दोहों का संग्रह संवत् १७३१ वि० में तैयार हुआ था। सूक्तिकार के रूप में वृन्द विशेष रूप से विख्यात हैं। इनके दोहे जीवन के अनुभव से पूर्ण एवं सरस ही नहीं होते, अपितु अलंकार-योजना के कारण भी काफी मशहूर हो गये हैं।

'भाव-प्रकाशिका' और 'शृङ्गार-शिक्षा' नाम से इनके दो और ग्रन्थों का उल्लेख मिलता है, लेकिन ये अभी तक उपलब्ध नहीं हुए हैं।

●

बिहारीलाल

रीतिकाल के कवियों में बिहारीलाल अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। इनका जन्म सं० १६६० वि० के लगभग ग्वालियर के निकट बसुवा-गोविन्दपुर में हुआ था। इनके दोहे मार्मिक और प्रभावशाली होते हैं। राज्य से विमुख जयसिंह को भी इन्होंने अपने एक दोहे द्वारा कर्त्तव्य का ज्ञान करा दिया था। इनके द्वारा रचित 'बिहारी सतसई' की दर्जनों टीकाएँ निकलना इसकी लोकप्रियता का प्रबल प्रमाण है। इसमें शृङ्गार, नीति और भक्ति-सम्बन्धी दोहे हैं। एक-एक दोहे के अनेक अर्थ निकाले जा सकते हैं। वास्तव में बिहारी ने गागर में सागर भर दिया है। इसीलिए, शायद इनके दोहों के सम्बन्ध में यह उक्ति प्रचलित है—

'सतसैया के दोहरे, अरु नावक के तीर।
देखन में छोटे लगैं, घाव करैं गम्भीर॥'

बिहारी की भाषा प्रचलित ब्रजभाषा का साहित्यिक रूप है। इसके अतिरिक्त यत्र-तत्र अपने दोहों में इन्होंने अरबी, फारसी, बुन्देलखण्डी, राजस्थानी आदि के शब्द भी प्रयुक्त किये हैं।

●

श्रीअयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

खड़ीबोली के सर्वप्रथम कवियों में श्रीअयोध्यासिंह उपाध्याय का नाम आदर के साथ लिया जाता है। आपका जन्म सं० १९२२ वि० में उत्तरप्रदेश के आजमगढ़ जिले के निजामाबाद ग्राम में हुआ था। खड़ीबोली का सर्वप्रथम महाकाव्य आपने ही लिखा। संस्कृत वर्णवृत्तों में 'प्रियप्रवास' की रचना कर आप अमर हो गये हैं। आपका ब्रजभाषा पर भी अच्छा अधिकार था। ब्रजभाषा में 'रस-कलश' की रचना कर आपने अपनी प्रतिभा का सुन्दर परिचय दिया है।

उर्दू पर भी आपका समान अधिकार था। खड़ीबोली में आपने 'प्रियप्रवास' और 'वैदेही-वनवास' नामक दो काव्यों की रचना की है। 'चुभते चौपदे' और 'चोखे चौपदे' ठेठ हिन्दी में रचे गये हैं। आप एक साथ शिक्षक, कवि एवं वक्ता थे।

सं० २००४ वि० में आपका देहान्त हो गया।

●

श्रीमैथिलीशरण गुप्त

श्रीमैथिलीशरण गुप्त आधुनिक हिन्दी-साहित्य के राष्ट्रीय कवि हैं। आपका जन्म सं० १९४३ में, झाँसी जिले के चिरगाँव में हुआ। आप ही एक ऐसे कवि हैं जो खड़ीबोली के आविर्भाव-काल से आज तक उसमें योगदान देते आ रहे हैं। आपकी कविता सरल और सरस होती है और पाठकों के हृदयों पर अपना प्रभाव डालने में समर्थ होती है। जब देश में राष्ट्रीय जागृति का आन्दोलन हो रहा था, उस समय आपने 'भारत-भारती' की रचना कर युवकों को स्वतन्त्रता के आन्दोलन में

आपकी रचनाओं में राष्ट्रीय भावनाएँ कूट-कूट कर भरी हुई हैं।

श्रीगुप्तजी नारी-समाज के प्रबल पक्षपाती रहे हैं। उपेक्षिता उर्मिला के महान् त्याग का परिचय देकर आपने उर्मिला के प्रति लोगों में सद्भावना एवं सहानुभूति पैदा की। यशोधरा, उत्तरा, सीताजी, कैकयी इत्यादि चरित्रों के प्रति भी जनता में आदरभाव पैदा किया और उन्हें उत्तम स्थान दिलवाया। 'साकेत' एक प्रबन्ध-काव्य है। यशोधरा, जय भारती, जयद्रथ-वध, किसान, पंचवटी, इत्यादि आपके प्रमुख काव्य-ग्रन्थ हैं। आपने माइकेल मधुसूदन दत्त कृत 'मेघनाद वध' का बँगला से हिन्दी में रूपान्तर किया। युग के अनुरूप आपका स्वर भी बदलता गया। 'झंकार' में रहस्यवादी कविता का परिचय मिलता है। आप मानवतावाद के प्रबल समर्थक हैं।

●

श्रीरामनरेश त्रिपाठी

आधुनिक हिन्दी खड़ीबोली के आदर्शवादी कवियों में त्रिपाठीजी का अत्यधिक गौरवपूर्ण स्थान है। आपका जन्म सं० १९४६ वि० में उत्तरप्रदेश के जौनपुर जिले के कोइरीपुर नामक गाँव में हुआ था। आपकी कविता अत्यन्त सरस होती है। आपने कई काव्य लिखे। मिलन और पथिक ने विशेष रूप से ख्याति प्राप्त की है। आप एक अच्छे वक्ता और टीकाकार के रूप में भी प्रसिद्ध हैं। आपने अनेक ग्रन्थों का सफलतापूर्वक सम्पादन भी किया है। ग्रामगीतों के संग्रह में एवं इनके प्रचार में आपने जो परिश्रम किया, वह सर्वथा स्तुत्य है। स्वयम् पैदल चलकर कई लोकगीतों का मूलरूप संग्रह कर प्रकाशित भी किया है। इस कार्य में आपको काफी श्रम उठाना पड़ा। हिन्दी के लोक-साहित्य के उद्धार का श्रेय आपको ही है। आप प्रकृति के प्रेमी और पुजारी हैं। मिलन और पथिक का प्रकृति-चित्रण सरस एवं प्रभावोत्पादक है।

'गोस्वामी तुलसीदास और उनकी कविता' आपकी प्रसिद्ध आलोचना-पुस्तक है।

●

पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

पंडित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' मस्ती के गायक हैं। इनकी कविताएँ भाव-प्रधान होती हैं। उनमें मधुर मस्ती, मोहक मादकता और उन्माद देखते ही बनता है।

कवि स्वयम् एक प्रमुख राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता हैं। अतः, आपकी रचनाओं में राष्ट्रीय भावनाओं की प्रधानता होती है। आपकी वेदनापूर्ण कविताएँ भी सफल हुई हैं। कभी, इनकी कविता कोमल दीखती है, तो कभी कठोर। कभी प्रेमप्रधान कविता रचते हैं, तो कभी आपकी वाणी में प्रलय का घन-गर्जन सुनाई देता है—'कवि कुछ ऐसी तान सुनाओ, जिससे उथल-पुथल हो जावे।' कभी—'बह चली आह कैसी बयार।' कहते प्रेम की मधुर स्मृतियों में आपका कवि अपने को भूल जाता है।

●

ठाकुर गोपालशरण सिंह

ठाकुर गोपालशरण सिंह सदा युग के स्वर में अपना स्वर मिलाकर आगे बढ़ते गये। सरस्वती-पत्रिका की छाया में आपकी कविता का विकास होता गया। घनाक्षरी, सवैया-जैसे ब्रजभाषा के छन्दों को भी आपने खड़ी बोली में सफलतापूर्वक लिखकर उनमें सरसता एवं माधुर्य का समावेश किया। यह आपकी सबसे बड़ी सफलता थी।

सामयिक विषयों पर आपने अनेक रचनाएं लिखी हैं। 'ग्राम' आपकी उत्तम कविता है।

●

पं० माखनलाल चतुर्वेदी

'एक भारतीय आत्मा' नाम से विख्यात पं० माखनलाल चतुर्वेदी हिन्दी के अमर कलाकारों में से हैं। आपका जन्म सं० १९४५ वि० में मध्यप्रदेश के होशंगाबाद में हुआ। आप एक अच्छे राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता,

कूद पड़ने की प्रेरणा दी। इसके कारण आपको जेल भी जाना पड़ा। आपकी रचनाओं में राष्ट्रीय भावनाएँ कूट-कूट कर भरी हुई हैं।

श्रीगुप्तजी नारी-समाज के प्रबल पक्षपाती रहे हैं। उपेक्षिता उर्मिला के महान् त्याग का परिचय देकर आपने उर्मिला के प्रति लोगों में सद्भावना एवं सहानुभूति पैदा की। यशोधरा, उत्तरा, सीताजी, कैकयी इत्यादि चरित्रों के प्रति भी जनता में आदरभाव पैदा किया और उन्हें उत्तम स्थान दिलवाया। 'साकेत' एक प्रबन्ध-काव्य है। यशोधरा, जय भारती, जयद्रथ-वध, किसान, पंचवटी, इत्यादि आपके प्रमुख काव्य-ग्रन्थ हैं। आपने माइकेल मधुसूदन दत्त कृत 'मेघनाद वध' का बँगला से हिन्दी में रूपान्तर किया। युग के अनुरूप आपका स्वर भी बदलता गया। 'झंकार' में रहस्यवादी कविता का परिचय मिलता है। आप मानवतावाद के प्रबल समर्थक हैं।

●

श्रीरामनरेश त्रिपाठी

आधुनिक हिन्दी खड़ीबोली के आदर्शवादी कवियों में त्रिपाठीजी का अत्यधिक गौरवपूर्ण स्थान है। आपका जन्म सं० १९४६ वि० में उत्तरप्रदेश के जौनपुर जिले के कोइरीपुर नामक गाँव में हुआ था। आपकी कविता अत्यन्त सरस होती है। आपने कई काव्य लिखे। मिलन और पथिक ने विशेष रूप से ख्याति प्राप्त की है। आप एक अच्छे वक्ता और टीकाकार के रूप में भी प्रसिद्ध हैं। आपने अनेक ग्रन्थों का सफलतापूर्वक सम्पादन भी किया है। ग्रामगीतों के संग्रह में एवं इनके प्रचार में आपने जो परिश्रम किया, वह सर्वथा स्तुत्य है। स्वयम् पैदल चलकर कई लोकगीतों का मूलरूप संग्रह कर प्रकाशित भी किया है। इस कार्य में आपको काफी श्रम उठाना पड़ा। हिन्दी के लोक-साहित्य के उद्धार का श्रेय आपको ही है। आप प्रकृति के प्रेमी और पुजारी हैं। मिलन और पथिक का प्रकृति-चित्रण सरस एवं प्रभावोत्पादक है।

'गोस्वामी तुलसीदास और उनकी कविता' आपकी प्रसिद्ध आलोचना-पुस्तक है।

●

सम्पादक, नेता और कवि हैं। राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेकर कई बार जेल हो आये हैं। खण्डवा से प्रकाशित होनेवाले साप्ताहिक 'कर्मवीर' के आप सफल सम्पादक हैं।

आपकी कविताओं में राष्ट्रीय भावनाओं की प्रधानता रहती है। 'पुष्प की अभिलाषा', 'कोकिल बोलो तो' उत्तम श्रेणी की कविताएँ हैं। आप कविता के द्वारा समाज में उत्तम मानवीय भावनाओं का प्रचार करना चाहते हैं। नेता बनने की अपेक्षा साधारण कार्यकर्त्ता बने रहने में ही आप गर्व का अनुभव करते हैं। 'हिमकिरीटिनी' और 'हिमतरंगिनी' आपके दो प्रसिद्ध कविता-संग्रह हैं।

'कृष्णार्जुन-युद्ध' नाटक भी पर्याप्त लोक-प्रिय है।

●

श्री जयशंकर प्रसाद

स्व० महाकवि जयशंकर प्रसाद आधुनिक हिन्दी-साहित्य की विभूति थे। आपका जन्म काशी में सं० १९४६ वि० में हुआ था। आपने अपनी भाषा, शैली और कथा-वस्तु द्वारा हिन्दी को जो देन दी, वह अद्भुत एवं अमर है।

प्रसादजी मात्र कवि ही नहीं, बल्कि एक ही साथ कहानीकार, उपन्यासकार, नाटककार और निबन्ध-लेखक भी थे। कहानी और उपन्यास के सम्भाषण भी काव्यमय होते हैं। आपने बौद्धयुग का अपने साहित्य में विभिन्न रचनाओं द्वारा समृद्ध परिचय दिया है।

'कामायनी' एक मनस्तत्त्व-प्रधान महाकाव्य है। 'आँसू' में आपने जो अनुभूतियाँ व्यक्त की हैं, और जो अभिव्यंजनात्मक शैली दी है, वे छायावाद और रहस्यवाद के उत्तम उदाहरण हैं। भाषा और शैली में आपने नये प्रयोग किये। आपके कई कहानी-संग्रह प्रकाशित हैं। 'सालवती', 'पुरस्कार' आदि श्रेष्ठ कहानियाँ मानी जाती हैं। आप एक साथ छायावादी और रहस्यवादी काव्यधारा के प्रवर्त्तकों में पांक्तेय हैं। आप पर हिन्दी-साहित्य को सदा अभिमान रहेगा।

आपकी प्रमुख रचनाएँ—

काव्य—कामायनी, आँसू, लहर, झरना, कानन-कुसुम आदि।

नाटक—चन्द्रगुप्त, स्कन्दगुप्त, अजातशत्रु, एक घूट, जनमेजय का नागयज्ञ, राज्यश्री आदि।

उपन्यास—कंकाल, तितली और इरावती (अपूर्ण) आदि।

कहानी-संग्रह—'आँधी, आकाशदीप, इन्द्रजाल आदि।

●

पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

आधुनिक कवियों में प्रसादजी के बाद निराला का नाम अत्यन्त आदर के साथ लिया जाता है। आपका जन्म सं० १९५३ वि० में बंगाल के मेदिनीपुर जिले के महिषादल स्टेट में हुआ था। आपकी प्रतिभा बहुमुखी है। हिन्दी में प्रथम शब्दों के बन्धनों को तोड़ आपने ही कविता लिखी है। आपकी कविता प्रसाद की भाँति संस्कृतगर्भित एवं प्रसादगुण से युक्त होती है। दर्शन की ओर सहज ही आपका झुकाव है। दार्शनिक पत्र 'समन्वय' का आपने सफलतापूर्वक सम्पादन किया। 'मतवाला' के भी आप सम्पादक रहे। रामकृष्ण परमहंस के आप बहुत बड़े भक्त है। आपने उनकी रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद किया है। हिन्दी के अतिरिक्त फारसी, अरबी, संस्कृत, अँगरेजी, फ्रेंच, बंगला आदि अनेक भाषाओं पर भी आपका अधिकार है।

आपकी कविता में संगीत-तत्त्व की प्रधानता होती है। आप एक अच्छे गायक हैं। आपके गाते समय श्रोता झूम उठते हैं और थोड़ी देर के लिए अपने को भूल जाते हैं। 'गीतिका' आपके गीतों का उत्तम संग्रह है। आप एक ही साथ कवि, कहानीकार, उपन्यासकार, निबन्ध-लेखक, सम्पादक, एवं शब्द-चित्रकार हैं। आपकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हैं। उनमें अनामिका, तुलसीदास, नये पत्ते, बिल्लेसुर बकरिहा, कुल्लीभाट, देवी, प्रबन्ध-पद्म, चाबुक इत्यादि श्रेष्ठ रचनाएँ मानी जाती है।

आपने हिन्दी-साहित्य को एक नई शैली प्रदान कर उसे ऊँचे आसन पर बैठाया। आपने राष्ट्रीय भावना-प्रधान और प्रगतिवादी रचनाएँ भी की हैं। साधारण भिखारी, विधवा एवं मजदूरिन को भी काव्यवस्तु बनाकर एक नये मार्ग का श्रीगणेश किया। आप पर हिन्दी को गर्व है।

●

श्रीसुमित्रानन्दन पन्त

हिन्दी-भाषा की पदावली को अत्यन्त कोमल एवं प्रांजल बनानेवालों में श्रीसुमित्रानन्दन पन्त का प्रमुख स्थान है। आप युगप्रवर्त्तक कवि हैं। हिन्दी के शैलीकारों में आपका नाम पहले लिया जाता है।

अलमोड़ा से ३२ मील उत्तर, हिमालय की सुरम्य उपत्यका में स्थित 'कौसानी' आपकी जन्मभूमि है। अतः बहुत-सा समय आपका प्रकृति के बीच व्यतीत हुआ। प्रकृति का प्रभाव भी आप पर गहरा पड़ा। आप गुञ्जन करने लगे। आपकी कविता में भावगत सौकुमार्य, सुन्दर अलङ्कार-योजना और नये रूपक पढ़ते ही बनता है। आपकी रचनाएँ, पाठकों को प्रकृति के सामीप्य का भान करा उससे गहरा सम्बन्ध जोड़ देती हैं।

आप छायावाद के अन्यतम कलाकार हैं। लेकिन आप सदा केवल एक ही वाद-विशेष में बँधे नहीं रहे। युग की परिस्थितियों के साथ आपका स्वर भी बदलता गया और उसके अनुरूप मुखरित होने लगा। यही कारण है कि संसार में जब आर्थिक विषमता फैली और मानवता का सर्वत्र संहार होने लगा तो आप प्रगतिवादी के रूप में समाज के सामने आये और दलित, पीड़ित एवं शोषित वर्ग के प्रतिनिधि बनकर रचनाएँ करने लगे। इस समय तो आप अरविन्द-दर्शन से प्रभावित हैं और मानवतावाद के प्रचारक के रूप में हमारे सामने आते हैं। आपने कहानियाँ और निबंध भी लिखे हैं। आपकी रचनाओं में ग्रन्थि, पल्लव, गुंजन, ग्राम्या, स्वर्णकिरण, युगवाणी आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

●

श्रीमती महादेवी वर्मा

छायावाद के कवियों में महादेवीजी ही स्पष्ट-रूप से रहस्यवादिनी हैं। आपका जन्म सं० १९६४ वि० में, फर्रूखाबाद में हुआ। आपके पिता का नाम बाबू गोविन्दप्रसाद वर्मा है, जो इन्दौर में प्रोफेसर तथा कुछ दिनों तक बिहार-राज्य में स्थित भागलपुर के टी० एन्० जे० कॉलिजियेट स्कूल के प्रधानाध्यापक थे। आप वेदना और विरह की गायिका हैं। वियोग में ही आत्मा का अस्तित्व है। इसलिए, आप मधुर पीड़ा से पूर्ण वेदना-साम्राज्य की रानी बनने में ही गर्व का अनुभव करती हैं।

आपका परिवार शिक्षा का केन्द्र था। आपने एम्० ए० संस्कृत में किया। शब्दावली तो मानो आपकी उँगलियों पर नाचा करती है। शब्द-चित्र खींचने में भी आप पटु हैं। चित्रकला में कुशल होने के कारण आपने अपनी कुछ कविताओं का भाव चित्रों में भी उपस्थित किया है। 'आभा' इस दृष्टि से पठनीय है।

इनकी भाषा और शैली से हिन्दी समृद्ध बन गई है। आपने कुछ कहानियाँ लिखी हैं और कुछ निबन्ध भी लिखे हैं। परन्तु, विशेषता यह है कि कविता की रचना में जहाँ आप अन्तर्मुखी हैं, वहाँ अन्य रचनाओं में बहिर्मुखी। नीहार, नीरजा, यामा, दीपशिखा आपके प्रसिद्ध काव्य हैं। अतीत के चलचित्र आपका प्रमुख निबन्ध-संग्रह है।

वर्त्तमान समय में आप प्रयाग महिला-विद्यापीठ की प्राचार्या हैं।

स्व० श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान

कवयित्रियों में श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान का निजी अस्तित्व है। आपका जन्म सं० १९६१ वि० में प्रयाग में, हुआ था। आपने देश-भक्तिपूर्ण जो कविताएँ रची हैं, वे आज भी स्मरणीय हैं। 'झाँसी-रानी की समाधि पर' कविता ने विशेष ख्याति प्राप्त की। यहाँ तक कि वह घर-घर याद की जाती है।

आप खण्डवा-निवासी ठाकुर लक्ष्मणसिंह चौहान की पत्नी थीं। राष्ट्रीय कार्यक्रम में भी आपने सक्रिय सहयोग दिया। आप कविता के साथ कहानी लिखने में भी पर्याप्त सफलता प्राप्त कर चुकी थीं। देश-प्रेम एवं शैशव-प्रेम आपकी कविताओं के प्रधान विषय है। आपकी भाषा में ओज तथा प्रवाह है!

मुकुल और त्रिधारा (काव्य), बिखरे मोती और उन्मादिनी (कहानी) आपकी उत्तम कला-कृतियाँ है।

सं० २००४ में एक मोटर-दुर्घटना में आपकी मृत्यु हो गई।

●

श्रीरामधारी सिंह 'दिनकर'

हिन्दी के राष्ट्रीय कवियों में कविवर दिनकर का नाम आदर के साथ लिया जाता है। आपका जन्म सं० १९६५ वि० में बिहार-राज्य में स्थित मुंगेर जिले के सिमरिया नामक गाँव में हुआ था। आप राष्ट्रीय भावना-प्रधान रचनाएँ कर लोगों में देश-प्रेम की भावनाएँ पैदा करने में काफी सफल हुए हैं। 'हिमालय के प्रति', 'दिल्ली' इत्यादि आपकी उत्तम कविताएँ है।

आपकी कविता में देश-प्रेम के साथ-साथ समाज-सुधार और शान्ति का सन्देश हमें मिलता है। भारत के अतीतकालीन खण्डहरों को देख कवि का हृदय रो पड़ता है। पुनः वे भारत को वह गौरव और वह पद दिलाना चाहते हैं। इसीलिए, वे बार-बार अर्जुन, भीम, प्रताप, शिवाजी आदि का आह्वान करते है।

आपकी वाणी में ओज और युवकों के लिए कर्मभूमि में सोल्लास लग जाने की ललकार है। भारतीय स्वतन्त्रता-संग्राम के दिनों में आपकी रचनाओं से युवकों के हृदय में अपूर्व राष्ट्रीय चेतना एवं बलिदान की भावना जागरित हुई थी।

आपने अनेक काव्य-ग्रन्थ लिखे हैं; उनमें रसवन्ती, हुंकार, रेणुका, कुरुक्षेत्र, रश्मिरथी आदि विशेष प्रसिद्ध है। आपने समय-समय पर अनेक मुख्य विषयों

पर निबन्ध भी लिखे हैं जो साहित्य की स्थायी निधि कहे जा सकते हैं। हाल ही में प्रकाशित 'संस्कृति के चार अध्याय' नामक ग्रन्थ आपके गम्भीर अध्ययन एवं परिपक्व अनुभव का द्योतक है। कवि-सम्मेलनों के तो आप प्राण हैं। विदेशों में भी आपने हिन्दी-भाषा की प्रतिष्ठा बढ़ाई है।

●

श्रीहरिवंश राय 'बच्चन'

'बच्चन' जी का जन्म प्रयाग में, सं० १९६४ वि० में हुआ। कविवर बच्चन हिन्दी में 'हालावाद' के प्रवर्त्तक के रूप में विशेष विख्यात हैं। आप हिन्दी के उमरखैय्याम माने जाते हैं। पहले, पण्डित-समाज द्वारा आपका घोर विरोध हुआ, लेकिन जब वे आपके विशाल आदर्श से परिचित हुए, तो आपके प्रशंसक ही बन गये।

आप कविता द्वारा व्यक्ति तथा समाज में आमूल परिवर्त्तन के इच्छुक हैं। आपने अनेक कविता-पुस्तकें लिखी हैं। प्रायः सभी पुस्तकें पाठकों द्वारा प्रेम से अपनाई गई हैं। आपकी काव्य-पुस्तकों में मधुशाला, मधुबाला, मधुकलश, निशा-निमन्त्रण, सतरंगिनी इत्यादि मुख्य हैं। आपकी भाषा सरल तथा कोमल है।

●

श्रीसियारामशरण गुप्त

श्रीसियारामशरणजी हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ कवि श्रीमैथिलीशरणजी के अनुज हैं! आपका जीवन अत्यन्त सरल एवं सादा है। आप मात्र कवि ही नहीं, कहानीकार, उपन्यासकार और लेखक भी हैं।

'गोद' आपका प्रसिद्ध उपन्यास है। आपकी अन्य रचनाओं में मौर्य-विजय, विषाद, आत्मोत्सर्ग, बापू, नारी, आर्द्रा आदि विशेष प्रसिद्ध हैं।

●

श्रीसोहनलाल द्विवेदी

सरल और सरस काव्य-प्रणयन में श्रीसोहनलाल द्विवेदी बड़े कुशल माने जाते हैं। आपने अनेक बालोपयोगी कविताएँ लिखी है। वे सब विशेष रूप से जनप्रिय हैं। महात्मा गाँधी के प्रति आपकी अपार आस्था, श्रद्धा एवं भक्ति थी। 'युगावतार बापू' आपकी उत्तम कविता है। आप एक अच्छे राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता है। आपके हृदय में देश-प्रेम का अगाध सागर उमड़ता दीखता है।

आपने कुछ पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया। आपका जीवन अत्यन्त सादा और सरल है। आधुनिक हिन्दी-बाल-साहित्य के निर्माताओं में आपका स्थान मूर्द्धन्य माना जाता है।